CHETANA
INTERNATIONAL JOURNAL OF EDUCATION (CIJE)
Peer Reviewed/Refereed Journal
(ISSN: 2455-8729 (E) / 2231-3613 (P))
Impact Factor
SJIF 2023 - 7.286

Prof. A.P. Sharma
Founder Editor, CIJE
(25.12.1932 - 09.01.2019)

लैंगिक समानता: मिथक या यथार्थ

डॉ.ज्योति सिडाना
सह-आचार्य, समाजशास्त्र विभाग
राजकीय कला कन्या महाविद्यालय कोटा (राज.)
E-mail- drjyotisidana@gmail.com, Mobile no.- 7976207834

First draft received: 28.01.2024, Reviewed: 08.02.2024, Final proof received: 10.02.2024, Accepted: 19.02.2024

सार-संक्षेप

आज जब किसी सार्वजानिक मंच पर लैंगिक समानता या लैंगिक भेदभाव की बात की जाती है तो लोग कहते हैं कि लड़कियों के साथ भेदभाव अब गुजरे जमाने की बात हो गयी है। अब तो जेंडर बराबरी का जमाना है या कहें कि अब तो लड़कियां हर क्षेत्र में लड़कों को भी पीछे छोड़ आगे निकल गई हैं। परंतु सवाल यह है कि क्या उनके विरुद्ध होने वाली हिंसा, दुर्व्यवहार और सोच में परिवर्तन आया है। अगर नहीं आया तो फिर महिला सशक्तिकरण की बात करना बेमानी प्रतीत होता है। निर्मला पुतुल लिखती हैं कि "धरती के इस छोर से उस छोर तक मुट्ठी भर सवाल लिए मैं दौड़ती, भागती, हाँफती, तलाश रही हूँ सदियों से निरंतर ,अपनी जमीन अपना घर, अपने होने का अर्थ "। उनका यह कथन लैंगिक समानता और महिला सशक्तीकरण के मुद्दे पर सवालिया निशान लगाता नजर आता है। यह सच है कि ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जहाँ महिलाओं ने अपना परचम नहीं फहराया हो। छोटे व्यवसायों से लेकर स्टार्ट-अप तक महिलाएं अपने-अपने उद्योगों में नवाचार और विकास को बढ़ावा दे रही हैं। आर्थिक, सामाजिक ,राजनीतिक हर जगह महिलाओं ने अपने कार्य और अपने नेतृत्व के माध्यम से यह साबित किया है कि महिलाएं समाज में महत्वपूर्ण बदलाव लाने में बराबर का योगदान करती आयी हैं।

मुख्य-शब्द : *महिला सशक्तीकरण, लैंगिक भेदभाव, कमला भसीन, प्रभा खेतान, निर्मला पुतुल आदि.*

परिचय

वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम की ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट 2023 के अनुसार लैंगिक समानता के मामले में भारत 146 देशों में से 127वें स्थान पर है जो पिछले साल से आठ स्थान का सुधार दर्शाती है क्योंकि रिपोर्ट के अनुसार 2022 में भारत 135वें स्थान पर था। कहते हैं कि किसी राष्ट्र की प्रगति को मापने का उत्तम तरीका है यह जानना कि वहां की महिलाओं के साथ कैसा व्यवहार किया जाता है। महिला सशक्तीकरण के बिना एक राष्ट्र की समृद्धि की कल्पना भी नहीं की जा सकती। सार्वजानिक जीवन में महिलाओं की न्यायसंगत सहभागिता एक मजबूत और जीवंत समाज की स्थापना के लिए आवश्यक हैं। अनेक अध्ययनों से पता चलता है कि वर्तमान में भारत में कामकाजी उम्र की 432 मिलियन महिलाएं हैं, जिनमें से 343 मिलियन असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं। मैकिन्से ग्लोबल इंस्टीट्यूट की एक रिपोर्ट में अनुमान लगाया गया है कि महिलाओं को समान अवसर प्रदान करके भारत वर्ष 2025 तक अपने सकल घरेलू उत्पाद में 770 बिलियन अमेरिकी डॉलर की वृद्धि कर सकता है। फिर भी सकल घरेलू उत्पाद में महिलाओं का वर्तमान योगदान 18% है जबकि जनसंख्या में उनकी हिस्सेदारी 48% है। जब आधी आबादी अर्थव्यवस्था में पूरी तरह से भाग नहीं ले रही हो तो समावेशी और टिकाऊ तरीके से विकास करना कठिन है। यदि लगभग 50% महिलाएँ कार्यबल में शामिल हो जाएँ तो देश में विकास की दर क्या होगी इसकी कल्पना की जा सकती है। औपचारिक अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी को कई पक्ष रोकते हैं जैसे देखभाल कार्य का असमान बोझ ,सार्वजनिक स्थानों पर सुरक्षा की कमी, देखभाल के बुनियादी ढांचे की अनुपलब्धता और भूमि, वित्त और डिजिटल प्रौद्योगिकी जैसे उत्पादक संसाधनों तक उनकी पहुँच

में कठिनाई इत्यादि उन्हें आर्थिक विकास की ओर बढ़ने से रोकते हैं। भारत के औपचारिक कार्यबल में महिलाओं का प्रतिशत कम होने के बावजूद महिलाओं का एक बड़ा हिस्सा कृषि, अनौपचारिक क्षेत्रों और छोटे व्यवसाय-आधारित उद्यमों में लगा हुआ है हालाँकि यह उन्हें औपचारिक रोजगार से बाहर रखता है, जो लैंगिक समानता और सामाजिक आर्थिक कल्याण के लिए हानिकारक है।

एनुअल स्टेटस ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट 2023 भारत में शिक्षा की जमीनी हकीकत ही नहीं बताती अपितु जेंडर विभाजन को भी व्यक्त करती है। इस रिपोर्ट के अनुसार भारत में 43. 7% लड़कों के पास पर्सनल स्मार्टफोन है जबकि सिर्फ 19.8% लड़कियों के पास अपना पर्सनल स्मार्टफोन है। 50% लड़कों के पास पर्सनल ईमेल आईडी है जबकि सिर्फ 30% लड़कियों के पास ईमेल आईडी है। 93. 4% लड़के सोशल मीडिया का इस्तेमाल करते हैं जबकि लड़कियां सिर्फ 87. 8% फीसदी करती हैं। ये रिपोर्ट कहती है कि एक चौथाई लड़के पढ़ाई इसलिए छोड़ देते हैं क्योंकि पढ़ने में उनका मन नहीं लगता और 20% लड़कियां इसलिए छोड़ देती हैं क्योंकि परिवार उन्हें पढ़ने नहीं देता। भारत में सिर्फ 10 फीसदी शिक्षित कामकाजी उम्र की महिलाएं जॉब मार्केट में हैं, जबकि शिक्षा में उनकी भागीदारी का आंकड़ा लगातार बढ़ रहा है। पिता की संपत्ति में उनकी हिस्सेदारी 8 फीसदी से भी कम है जबकि भारतीय उत्तराधिकार कानून उन्हें यह हक काफी समय पहले ही दे चुका है। अगर लडकियां अपने पिता की संपत्ति में हक़ माँगने का दुस्साहस करती हैं तो भाई-बहन के रिश्ते ही हाशिए पर चले जाते हैं। संभवतः इसलिए नारीवादी लेखिका प्रभा खेतान महिलओं को संबोधित करते हुए लिखती हैं कि पुरुष की जमीन पर खड़ी होकर पुरुषों के ख़िलाफ बोलोगी तो उठाकर फेंक दी जाओगी ,अपनी जमीन तैयार करों।

यह एक तथ्य है कि वास्तविक दुनिया में तो महिलाएं दुर्व्यवहार और हिंसा का सामना करती आयी हैं लेकिन सूचना तकनीक के विकास ने आभासी दुनिया में भी महिलाओं के अस्तित्व को चुनौती दी है। हाल ही में ब्रिटेन में एक विचित्र मामला सामने आया। आभासी दुनिया में एक 16 साल की लड़की के साथ गैंगरेप हुआ। एक ऐसी आभासी दुनिया जहां जाकर कोई भी अपना एक आभासी अवतार क्रिएट कर सकता है। लड़की ने बताया कि रेप भले ही वर्चुअल/आभासी दुनिया में हुआ ,उसके शरीर पर एक खरोंच तक नहीं आई लेकिन इसके बावजूद उसे लगा कि किसी ने उसके साथ दुर्व्यवहार किया है। यह इस बात को सिद्ध करता है कि जब आभासी दुनिया में उसके काल्पनिक अवतार के साथ बलात्कार होने से ही वह बच्ची दर्द और सदमे में है तो वास्तविक दुनिया में जिन बच्चियों के साथ इस तरह का दुर्व्यवहार होता है वे किस पीड़ा का सामना करती होंगी। अमृता प्रीतम ने लिखा था कि सभ्यता का युग तब आएगा जब औरत की मर्जी के बिना कोई उसके शरीर को हाथ नहीं लगाएगा। वर्तमान में महिलाओं के विरुद्ध बढती हिंसा और दुर्व्यवहार की घटनाओं को देखकर क्या ऐसा लगता है कि सभ्यता का युग आएगा। हाँ ऐसा हो सकता है जब औरत खुद के लिए खड़ी होना शुरू कर दे। किसी ने सही तो कहा है कि तेरी मर्जी से ढल जाऊ हर बार यह मुमकिन नहीं ,मेरा भी अस्तित्व है मैं कोई आईना नहीं। जिस दिन पुरुष समाज महिला को इंसान के रूप में स्वीकारेगा उसी दिन से बराबरी का समाज स्थापित हो जायेगा।

ऐसा नहीं है कि संविधान में महिलाओं को संरक्षण या बराबरी देने के लिए कोई प्रावधान नहीं किया गया -समान कार्य के लिए समान वेतन, कार्यस्थल पर यौन शोषण या उत्पीडन के विरुद्ध कानून, सुरक्षित कार्य वातावरण, मातृत्व अवकाश की सुविधा, चाइल्ड केयर सुविधा, इत्यादि परंतु इन सबके बावजूद भी गैर बराबरी बदस्तूर जारी है। कानून तो बना दिए गए परंतु उनकी पालना आज तक सुनिश्चित नहीं हो पाई। क्योंकि इन कानूनों का उल्लंघन करना पुरुष समाज की नजर में अपराध नहीं है। अनेक अध्ययन बताते हैं कि महिलाएं अनौपचारिक एवं असुरक्षित रोजगार में अधिक शामिल होती हैं, महिलाओं को पुरुषों की तुलना में कम वेतन दिया जाता है, वे अवैतनिक देखभाल और घरेलु कार्यों की जिम्मेदारी निभाती हैं जिस पर लगभग ढाई गुना अधिक समय खर्च करती हैं। उसके बावजूद भी अधिकांश पति) पुरुष (अपनी पत्नियों) महिला (से कहते हैं कि आखिर तुम करती ही क्या हो ?क्योंकि बच्चे पालना, घर संभालना ,खाना बनाना, कपडे धोना, परिवार के आश्रित सदस्यों की देखभाल करना और सबकी मर्जी व पसंद का ख्याल रखना पुरुष समाज की नजर में कोई काम नहीं होता।

डिजिटल लिटरेसी में भी लैंगिक विभाजन देखा जा सकता है, महिलाएं गिलास सीलिंग का सामाना करती हैं। यहाँ ग्लास सीलिंग का अर्थ उन अदृश्य बाधाओं से है जिनके फलस्वरूप महिलाओं और अल्पसंख्यकों को अपने करियर में आगे बढ़ने के अवसरों से वंचित किया जाता है ताकि वे उच्च शीर्षस्थ पदों पर न पहुंच पाएं ,इन अदृश्य बाधाओं को ग्लास सीलिंग कहते हैं। गे ब्रायंट ने 1984 में" द वर्किंग वुमन रिपोर्ट "में" ग्लास सीलिंग " शब्द का प्रथम बार उपयोग किया था। आकड़ों के अनुसार कंपनी के सर्वोच्च पदों पर केवल 5 प्रतिशत महिलाएं हैं। इसी तरह महिला किसानों के पास अपने पुरुष समकक्षों की तुलना में भूमि और उत्पादक संपत्तियों पर नियंत्रण व स्वामित्व बहुत ही कम)लगभग12 . 8प्रतिशत (है। संयुक्त राष्ट्र के आँकड़ों से यह और भी स्पष्ट हो जाता है, "दुनिया में किए जाने वाले काम के 60 प्रतिशत से अधिक घंटे महिलाएँ काम करती हैं, लेकिन उन्हें दुनिया की आय का 10 प्रतिशत मिलता है और दुनिया की संपत्ति का एक प्रतिशत उनके पास है।" जबकि समाज वैज्ञानिक और बुद्धिजीवी वर्ग यह कहता है कि अगर लैंगिक विभेद को कम कर दिया जाए तो जीडीपी में 15 प्रतिशत की वृद्धि हो सकती है। इन नीतियों का सख्ती से पालन करने पर भारत की अर्थव्यवस्था विकसित राष्ट्रों में अग्रणी बन सकती है। इस अनुमान को मूर्त रूप में बदलने के लिए जरुरी है कि गिलास सीलिंग को तोडा जाए। क्योंकि यह कहकर महिलाओं को अधीनस्थ पदों पर नियुक्त करना कि वे जोखिम लेने से बचती हैं सही नहीं है। और यह सोचना भी गलत है कि जो जोखिम से बचता है उनमे नवाचार, सृजनात्मकता और साहस की कमी होती है।

लैंगिक भेदभाव केवल भारत का ही नहीं सम्पूर्ण विश्व का एक यथार्थ है। लड़कियों को अधिकांश अधिकार बहुत संघर्ष के बाद ही मिल पाए हैं जैसे मताधिकार, शिक्षा का अधिकार, निजी स्पेस से परे सार्वजानिक स्पेस में प्रवेश करने का अधिकार, आत्मनिर्भर बनने का अधिकार, निर्णय लेने का अधिकार, विवाह करने या न करने का अधिकार, राजनीति में सहभागिता करने और चुनाव लड़ने का अधिकार, संपत्ति में अधिकार यहाँ तक कि स्वतंत्र रूप से बोलने का अधिकार इत्यादि। लेकिन इन सबके बावजूद भी उसे अभी समाज में सुरक्षा का अधिकार नहीं मिल पाया है। आए दिन सडको, ट्रेनों, बसों, घरों, खेतों, दफ्तरों में लड़कियां वो सब झेलने को मजबूर होती हैं जो संवैधानिक दृष्टि से भले ही अनैतिक और गैर कानूनी है लेकिन फिर भी समाज में खुले आम प्रतिदिन होता है मानों उन्हें सामाजिक वैधता प्राप्त हो। अश्लील फब्तियां, छेड़छाड़, शरीरांगों को गलत तरीके से छूना, दुर्व्यवहार, शारीरिक व मानसिक हिंसा, बलात्कार, अपहरण ऐसी अनेक प्रताड़नाओं का लड़कियां प्रतिदिन सामना करती हैं। ऐसा भी नहीं है कि इन व्यवहारों के विरुद्ध कानून नहीं है लेकिन कानून इतना भी मजबूत नहीं है कि इन घटनाओं को रोक सके। कभी राजनीति तो कभी पैसा, शक्ति और भाई-भतीजावाद इस तरह के कानून पर हावी हो जाते हैं। आज के दौर में राम राज्य और कल्याणकारी समाज की स्थापना कोरी कल्पना मात्र है समाज में बढती इन घटनाओं को देखकर लगता नहीं है कि इन्हें समाप्त करने की कोशिश भी की जा रही है। सिर्फ नारों और विज्ञापनों से समाज की सोच नहीं बदल सकती इसके लिए नए सिरे से पुरुषसत्तात्मक समाज का समाजीकरण करने की आवश्यकता है।

कुछ समय पूर्व बनारस हिंदू विश्वविद्यालय आईआईटी कैंपस में एक छात्रा रात में अपने दोस्त के साथ घूम रही थी जिसके साथ बाइक सवार 3 बदमाशों ने बदसलूकी की और बंदूक की नोंक पर उसे निर्वस्त्र कर वीडियो बनाया। बनारस, चंडीगढ़ और दिल्ली विश्विद्यालय में इन घटनाओं का होना कोई नई बात नहीं है पहले भी इस तरह की घटनाये होती रही हैं। लेकिन कुछ दिन की मीडिया कवरेज के बाद इन्हें सब भूल जाते हैं। स्त्रीवादी लेखिका कमला भसीन तर्क देती हैं कि पितृसत्ता के खिलाफ आवाज ना उठाने वालों को इससे मिलने वाले फायदे इतने पसंद आते हैं कि वह इसकी बुराई देखते ही नहीं हैं। इसलिए स्पष्ट है कि जब तक किसी को इन घटनाओं में बुराई दिखाई ही नहीं देगी तो वे इनको रोकने के प्रयास कैसे करेंगे। जिस कैंपस में घटना घटती है केवल वहीं के कुछ छात्र कुछ दिन चिल्लाते हैं, प्रदर्शन करते हैं, मीडिया में खबर प्रकाशित होती है और फिर सब जगह ख़ामोशी। अगले दिन फिर कोई नई घटना चर्चा में आती है और इसी तरह महिलाओं के विरुद्ध हिंसा और दुर्व्यवहार का क्रम निरंतर जारी है। चौकाने वाली बात यह है कि यह सभी स्थान शिक्षा के मन्दिर हैं जहाँ मनुष्य को एक सभ्य नागरिक बनने की शिक्षा दी जाती है, उन्हें शोषण और दमन के विरुद्ध आवाज उठाना सिखाया जाता है और ज्ञान रुपी शस्त्र से सशक्त बनाया जाता है। अगर वहां इन घटनाओं को होने से नहीं रोका जा सकता तो शेष समाज में क्या होता होगा कल्पना भी नहीं की जा सकती।

पेरियार ई. वी. रामासामी तर्क देते हुए कहते हैं कि पुरुषसत्ता और पूंजीवाद दोनों के विनाश के बिना किसी आधुनिक समाज का निर्माण नहीं किया जा सकता है। पुरुषों द्वारा महिलाओं को गुलाम समझने की प्रवृत्ति पर वे लिखते हैं कि पुरुष के लिए एक महिला उसकी रसोइया, उसके घर की नौकरानी, उसके परिवार या वंश को आगे बढ़ाने के लिए प्रजनन का साधन है और उसके सौन्दर्यबोध को संतुष्ट करने के लिए एक सुन्दर ढंग से सजी गुड़िया है। उनका यह तर्क आज भी सत्य सिद्ध होता है क्योंकि जब भी समाज में महिलाओं के विरुद्ध दुर्व्यवहार या हिंसा की कोई घटना चर्चा में आती है तो अधिकांश नेता और अभिनेता यह कहते सुने जाते हैं कि महिलाओं का कार्यबल में शामिल होना और पुरुषों के समान पद मांगना ही सबसे बड़ी समस्या है। मीटू अभियान के दौरान इस तरह के अनेक कथन सुने और पढ़े गए थे। 21वीं सदी में हुए अनेक व्यापक बदलावों के बावजूद भी पुरुषवादी सोच रखने वाले लोग स्त्रियों को उनकी कमजोर बुद्धि और कमजोर शरीर का बहाना बना कर कई अधिकारों से वंचित करते नजर आते हैं।

एक महिला से हमेशा से ही यह अपेक्षा की जाती है कि वह एक अच्छी बेटी, अच्छी बहन, अच्छी पत्नी और अच्छी माँ बने उसके बाद कुछ अपने लिए सोचे। यह सारी अपेक्षाए पुरुषों से क्यों नहीं की जाती। ग्लोरिया स्टीनम कहती है कि महिलाओं को दुनिया के अनुरूप बनाने की मत सोचो, बल्कि दुनिया को महिलाओं के अनुरूप बनाने की सोचो। संभवतः ग्लोरिया का यह तर्क जी. डी. एंडरसन के तर्क को समर्थन देता नजर आता है जो मानती हैं कि नारीवाद महिलाओं को मजबूत या सशक्त बनाने के विषय में नहीं है, महिलाएं पहले से ही मजबूत हैं। बल्कि यह उस दृष्टिकोण को बदलने के बारे में है जिस तरीके से दुनिया महिलाओं की शक्ति/मजबूती को देखती है। महिलाएं हमेशा कहती रहती हैं हम वह सब कुछ कर सकते हैं जो पुरुष कर सकते हैं। लेकिन क्या पुरुष यह कह सकते हैं कि हम वह सब कुछ कर सकते हैं जो महिलाएं कर सकती हैं। अगर नहीं कह सकते तो फिर खुद को श्रेष्ठ एवं शक्तिशाली और महिलाओं को अधीनस्थ व कमजोर कहने की मानसिकता को बदल लेना चाहिए। पुरुष समाज को यह हमेशा याद रखना चाहिए कि प्रकृति ने महिला और पुरुष के बीच भेद अवश्य किया है लेकिन भेदभाव नहीं किया और जब बनाने वाले ने भेदभाव नहीं किया तो इंसान को किसने यह हक़ दिया कि वे इस अन्तर को स्थापित करें। जब तक यह मानसिकता नहीं बदलेगी तब तक बराबरी के समाज की कल्पना करना या महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को रोकने जैसे कदम सफल नहीं हो सकते।

यह भी एक तथ्य है कि महिलाओं के अधिकारों की बात करना अधिकांशतः पुरुषों से घृणा करने का प्रतीक मान लिया जाता है जो गलत है। महिलाओं के स्वभाव को अहिंसक, विनम्र, शांत, भावनात्मक, त्यागशील, कर्तव्यनिष्ठ, जिम्मेदार और सम्बन्धों के प्रति प्रतिबद्ध के रूप में प्रचारित करके समाज महिलाओं को अपनी मुक्ति के संघर्ष में हिस्सा लेने और आवाज उठाने से रोकते हैं। परिवार में लड़कियों को खुद को सीमित दायरे में रखना सिखाते हैं, लड़कियों से कहते हैं कि आप महत्वाकांक्षा हो सकती हैं लेकिन बहुत ज़्यादा नहीं। आपको सफल होने का लक्ष्य रख सकती हैं

लेकिन बहुत अधिक सफल होने का नहीं। क्योंकि ऐसा करना पुरुष समाज को चुनौती देना होगा। कहीं सच में ऐसा तो नहीं हुआ क्योंकि जब से महिलाओं ने स्वयं को निजी परिवेश से निकालकर सार्वजनिक परिवेश का हिस्सा बनाया है या अपनी उच्च महत्वकांक्षाओं को आकार देना शुरू किया है, अपने सपनों को अमली जामा पहनाने की कोशिश शुरू की है तब से ही महिलाओं के विरुद्ध हिंसा और दुर्व्यवहार की घटनाओं में अचानक से बेतहाशा वृद्धि होने लगी है। जिसके प्रतियुत्तर में तर्क दिए जाते हैं कि सार्वजानिक स्पेस महिलाओं के लिए नहीं हैं वे घर की चार दीवारी में ही सुरक्षित रह सकती है। अगर ऐसा है तो द्रोपदी क्यों अपने ही घर में अपने परिवार के सामने अपनों के द्वारा ही बेइज्जत हुई थी। आज भी कई ऐसी घटनाएँ सामने आती हैं जिनमे लड़कियों के पिता, चाचा, दादा, भाई, ससुर उनके चरित्र को दागदार कर देते हैं।

महिलाओं का काम परिवार की सेवा और बच्चों का लालन-पालन करना ही है इसलिए उन्हें वही तक ही सीमित रहना चाहिए। परंतु आज हम जहां भी देखें ऐसा कोई क्षेत्र नहीं दिखता जहाँ महिलाएं अग्रणी न हों प्रधानमन्त्री, राष्ट्रपति, मुख्यमंत्री, कंपनी की सीईओ, मैनेजर, कुलपति, चिकित्सक, पायलट, पुलिस अधिकारी, प्रशासक, न्यायाधीश, वैज्ञानिक इत्यादि। इसके साथ-साथ वे गृहिणी बनकर अपने बच्चों का पालन-पोषण करती है और अपने घर को भी संभालती है। आवश्यकता इस बात की है कि एक महिला क्या करती है या क्या करना चुनती है यह पूरी तरह से उसका निर्णय होना चाहिए जैसे एक पुरुष को होता है। देखा जाए तो लैंगिक असमानता वाले समाज में बदलाव के लिए कुछ ज्यादा बदलाव करने की जरुरत नहीं है केवल मानसिकता और दृष्टिकोण में बदलाव ही गैर बराबरी को समाप्त करने की दिशा में एक सकारात्मक और महत्वपूर्ण कदम साबित होगा।

सारांश

प्रसिद्ध नारीवादी सिमोन द बुआ लिखती है कि पुरुष को मनुष्य के रूप में और स्त्री को स्त्री के रूप में परिभाषित किया जाता है। जब भी स्त्री मनुष्य की तरह व्यवहार करती है तो उस पर पुरुष की नकल करने का आरोप लगाया जाता है। एक समानतामूलक और न्यायपूर्ण समाज की स्थापना के लिए बहुत जरुरी है कि स्त्री को भी मनुष्य के रूप में परिभाषित किया जाए। कहते हैं कि औरते बहुत भली होती हैं जब तक वे पुरुषों की हाँ में हाँ मिलाती हैं। औरते बहुत बुरी होती हैं जब वे सोचने, समझने और खड़ी होकर उनके विरुद्ध बोलने लगती हैं। आज की सदी ज्ञान की सदी है जहाँ ज्ञान को शक्ति माना जाता है। ऐसे में महिला को भी ज्ञान के क्षेत्र में इतना गहरा उतरना होगा कि वह न केवल हर तरह के भय का सामना कर सके अपितु इस सभ्य कहे जाने वाले समाज में एक शिष्ट जीवन भी जी सके। ज्ञान की इस शक्ति के द्वारा ही महिला न केवल अपने शोषण से मुक्ति पा सकती है अपितु शक्ति संबंधों में भी अपना स्थान सुनिश्चित कर सकती है शायद तभी बराबरी का समाज उभार ले सके।

सन्दर्भ

सिमोन द बुआ (1949), द सेकंड सेक्स, लाइब्रेरी गलिमार्ड : फ्रांस।

पेरियार ई। वी। रामासामी (2020), जाति व्यवस्था और पितृसत्ता (संपादक प्रमोद रंजन), राधाकृष्ण प्रकाशन: दिल्ली।

जीडी। एंडरसन (1995) चैंजिंग द परसेप्शन ऑफ़ फेमिनिस्म, https://wwwipl.org/essay/Role- of-Feminism-Essay-PC52JZ5ZN

ग्लोरिया स्टीनम (2020) वजूद औरत का: स्त्री विमर्श प्रतिनिधि पाठ, राजकमल प्रकाशन: दिल्ली।

भसीन, कमला (1993), व्हाट इस पेट्री आर्की, काली फॉर वुमन: नई दिल्ली।

प्रभा खेतान (1996), अपने-अपने चेहरे, किताबघर : नई दिल्ली।

गे ब्रायंट (1984), द वोर्किंग वुमन रिपोर्ट : स्क्सीडिंग इन बिज़नस इन द एटीस, साइमन और शूस्टर: न्यूयॉर्क

https://www.fortinberrymurray.com/todays-research/the-glass-ceiling-three-reasons-why-it-still-exists-and-is-hurting-the-economy

अमृता प्रीतम (2014), मेरी प्रिय कहानियां, राजपाल एंड संस : दिल्ली।

निर्मला पुतुल (2004), अपने घर की तलाश में, रमणिका फाउंडेशन: नई दिल्ली।

वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम: ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट-2023, https://www.weforum.org/publications /global-gender-gap-report-2023/

मैकिन्से ग्लोबल इंस्टीट्यूट: https://m.economictimes.com/jobs/hr-policies-trends/how-apprenticeships-can-serve-as-a-vital-vehicle-to-address-low-women-labor-participation-in-india/articleshow/108810757.cms

एनुअल स्टेटस ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट 2023, https://asercentre.org/aser-2023-beyond-basics/